International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(3): 270-273

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(3): 270-273
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 06-03-2017
Accepted: 07-04-2017

जितेन्द्र कुमार मौर्य
शोधच्छात्र, विकृति विज्ञान विभाग, आयुर्वेद संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

डॉ. पी.एस. ब्याडगी
शोध निर्देशक, विकृति विज्ञान विभाग, आयुर्वेद संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

Correspondence
डॉ. पी.एस. ब्याडगी
शोध निर्देशक, विकृति विज्ञान विभाग, आयुर्वेद संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

आयुर्वेद में रस एवं रक्त धातुः एक अध्ययन

जितेन्द्र कुमार मौर्य एवं डॉ. पी.एस. ब्याडगी

प्रस्तावना

धारणात् धातवः अर्थात् जो शरीर का धारण करे उसे धातु कहते है। धातुएं शरीर को धारण करने के साथ–साथ उनका पोषण भी करती है तथा शरीर को स्वथ्य बनाये रखती है। शरीर का रचनात्मक रूप से धारण करने वाली धातुओं की संख्या आयुर्वेद में सात कही गई है। रस, रक्त, मांस, मेद,अस्थि,मज्जा,और शुक्र। सम्पूर्ण शरीर का रचनात्मक स्वरूप इन्हीं सप्तधातुओं से रचित होती हैं। धातुओं का निर्माण आहार रस पर विभिन्न धात्वाग्निओं की प्रक्रिया द्वारा सम्भव होती हैं।

रस धातु

'रस गतौ' धातु से रस शब्द बनता है। रसति इति रसः। रस सभी धातुओं का पोषक हैं।

रस के प्राकृत कर्म

रसस्तुष्टिं प्रीणनं रक्तपुष्टिं च करोति।
–सु0 सू 15/5 ।।[1]

रस का कार्य है शरीर का पोषण करना, तृप्ति करना और रक्त धातु का निर्माण करना है।

रस क्षय के लक्षण

घट्टते सहते शब्दं नोच्चैर्द्रवति, शूल्यते
हृदयं ताम्यति स्वल्पचेष्टस्यापि रसक्षये
– च0 सू0 17/64 ।।[2]

रस धातु के क्षीण होने पर थोड़ा सा परिश्रम करने वाले के हृदय में हिलाये जाने का अनुभव होता है, तेज या जोरदार शब्दों की सहनशक्ति नही रह जाती, हृदय में जल्दी घबराहट होने लगती है, कुछ चुभने की पीड़ा होती हैं और आँखों के सामने अँधेरा सा प्रतीत होने लगता हैं।
भगवान धन्वन्तरि के अनुसार रसक्षय में हृदय में वेदना, कम्पन, शोष, शून्यता और बार–बार प्यास का लगना ये लक्षण है।

रसक्षये हृत्पीडाकम्पशून्यतास्तृष्णा च।।
– सु0 सू0 15/9 ।।[3]

रसवृध्दि के लक्षण

रसोऽतिवृद्धो हृदयोत्क्लेदं प्रसेकं चापादयति।।
– सु0सू0 15/14 ।।[4]

रस धातु के बढ़ने पर हृदय में उत्क्लेश, जी मिचलाना, छर्दि, अग्निमांद्य, काश, श्वास, अतिनिद्रा, आलस्य, शरीर का भारीपन, शरीर का सफेद होना, शरीर का ठंडा होना और शरीर का शिथिल होना आदि लक्षण पाये जाते हैं।

रस प्रदोषज विकार

अश्रद्धा चारुचिश्चास्यवैरस्यमरसज्ञताद्य
हृल्लासो गौरवं तन्द्रा साङ्गमर्दो ज्वरस्तमः ||९||
पाण्डुत्वं स्रोतसां रोधः क्लैब्यं सादः कृशाङ्गताद्य
नाशोऽग्नेरयथाकालं वलयः पलितानि च||१०||
रसप्रदोषजा रोगा ।।
— च0सू0 28/9–10 ।।[5]

अन्नद्वेष– अन्न का तिरस्कार करना, भोजन में श्रध्दा न होना, यह कफ के प्रकोप, रसाग्नि की मन्दता से होता है।

अरूचि– भोजन करने की इच्छा न होना। यह प्रकोप, ज्ञानेन्द्रियों की विकृति तथा मन के दुःखी होने पर होता हैं।

मुखवैरस्य– मुख का स्वाद विकृति होना। यह बोधक कफ की दृष्टि के कारण कसैला तथा कटु स्वाद होता हैं।

अरसज्ञता– जिह्वा के द्वारा रस का अनुभव न होना। यह बोधक कफ की दृष्टि से होता हैं।

हृलास– जी मिचलाना। बोधक कफ तथा क्लेदक कफ की वृध्दि से होता हैं। हृलास के अधिक होने पर वमन भी हो जाता हैं।

गौरव– भारीपन। शरीर में गौरव होने से शरीर स्फूर्ति के साथ कार्य नही करता हैं।

तद्रा– उबन मसिूस होने लगती हैं।

अंगभर्द– अंगो में ऐठन सम पीड़ा होना।

ज्वर– शरीर, इन्द्रिय तथा तन में संताप होना। यह पित्त के उष्ण गुण की वृध्दि होने पर होता हैं।

तम– आँखो के सामने अन्धकार होना तथा शरीर का अन्धकार में डूबने के समान अनुभव होना

पाण्डु– शरीर का पीला होना।

क्लैव्य– पुंसत्वनाश अर्थात् स्त्री प्रसंग में अशक्ति होना।

अंगसाद– अंगो का शिथिल होना।

क्षय– क्षीणता।

अग्निमांद्य– अग्नि की मंदता।

वली– युवा अथवा प्रौढ़ावस्था में झूरियां पड़ना।

पलित– असमय में बालों का पकना।

हृदोग– वात रोग के कारण हृदय में गति सम्बन्धी विकृतियां तथा शूल मिलता हैं। पित्त दोष के कारण हृदय में पाक एवं शोथ होता हैं। कफ दोष के कारण हृदय विस्तृत हो जाता हैं।

अविपाक– भोजन का न पचना अविपाक कहलामा हैं। यह अजीर्ण की अवस्था होती हैं।

रस धातु दुष्टि के लक्षण

गुरुशीतमतिस्निग्धमतिमात्रं समश्नताम्द्य
रसवाहीनि दुष्यन्ति चिन्त्यानां चातिचिन्तनात्||
— च0वि0 5/13 ।।[6]

गुरू द्रव्यों का अति सेवन, शीत द्रव्यों का अति सेवन, अतिस्निग्ध द्रव्यों का अति सेवन, अत्यधिक चिन्ता इत्यादि रस धातु दुष्टि के कारण हैं।

रक्त धातु

स्वस्थ व्यक्ति का रक्त बीर बहूटी के समान लाल वर्ण का द्रव पध्दार्थ होता हैं। सामान्यतः शरीर में रक्त का प्रमाण आठ अंजली अर्थात् लगभग डेढ लीटर हैं। आधुनिक विज्ञान के मतानुसार शरीर में रक्त लगभग डेढ़ लीटर होता हैं। रक्त में 55: भाग रक्तरस तथा 45: भाग कोशिकाओं का होता हैं।

रक्त धातु के प्राकृत कर्म

रक्तं वर्णप्रसादं मांसपुष्टिं जीवयति च।।
— सु0सू0 15/05 ।।[7]

वर्ण प्रसाद अर्थात् शरीर के रंग का निखार करता हैं। मांस धातु को पोषण करता है, प्राण एवं आयु का आधार रक्त है और शरीर के बल का कारण रक्त हैं।

रक्त क्षय के लक्षण

परुषा स्फुटिता म्लाना त्वग्रूक्षा रक्तसङ्क्षये।।
— च0 सू0 17/64 ।।[8]

रक्त धातु के क्षीण होने पर ज्वचा में खुरदरापन, फट जाना, मुरक्षा जाना तथा उसमें रूखापन हो जाता हैं।
वास्तव में जब शरीर में रक्त की कमी हो जाती है तो उसकी शिरायें ढीली पड़ जाती हैं। उनमें रक्त भरा नही रहता, फलतः उक्त लक्षण दिखयी देते हैं। इस समय रोगी की इच्छा शीतल तथा अम्ल पध्दार्थो के सेवन के प्रति जागरूक हो जाती हैं।

रक्त वृध्दि के लक्षण

रक्तं विसर्पप्लीहविद्रधीन्||८||
कुष्ठवातास्रपित्तास्रगुल्मोपकुशकामलाः|
व्यङ्गाग्निनाशसम्मोहरक्तत्वङ्नेत्रमूत्रताः||९|
— अष्टांग हृ0 सू0 11/8–9 ।।[9]

विभिन्न कारणों से बढ़ा रक्त धातु विसर्परोग, प्लीहारोग,विद्रधिरोग, कुष्ठ, वातरक्त, पित्तजरोग, रक्तपित्तरोग, गुल्मरोग, उपकुशरोग, कामलारोग, क्षुद्ररोग, अग्निनाश, मूर्च्छा, त्वचा, नेत्र एवं मूत्र में लालिमा का होना। इन लक्षणों को उत्पन्न कर देता हैं।

रक्तप्रदोषज विकार

वक्ष्यन्ते रक्तदोषजाः|
कुष्ठवीसर्पपिडका रक्तपित्तमसृग्दरः||११||
गुदमेढ्रास्यपाकश्च प्लीहा गुल्मोऽथ विद्रधिः|
नीलिका कामला व्यङ्गः पिप्लवस्तिलकालकाः||१२||

दद्रुश्चर्मदलं श्वित्रं पामा कोठास्रमण्डलम्द्य
रक्तप्रदोषाज्जायन्ते
च0सू0 28/13 ।।[10]

कुष्ठ–यह त्रिदोषज व्याधि त्वचा और मांस में रस–रक्त धातु अके माध्यम से विकार उत्पन्न करती हैं।

विसर्प–पित्त दोष के कारण रक्त की दुष्टि से विसर्प उत्पन्न होता हैं।

पिडिका–पित्त और कफ के कारण रक्त की दुष्टि से पिडिका उत्पन्न होती हैं।

रक्तपित्त–पित्त में तीक्ष्ण गुण की वृध्दि होनेपर रक्त की दुष्टि करके, रक्तपित्त उत्पन्न करता हैं।

रक्तप्रदर–रक्त प्रदर में योनि मार्ग में रक्तस्त्राव होता हैं। पित्तदोष के कारण रक्तवह स्रोतस् में अतिप्रवृत्ति की दुष्टि होती हैं।

गुदपाक–पित्त दोष के कारण रक्तवह स्रोतस् में संग होने से गुदपाक उत्पन्न होता हैं। इसमें गुदा के चारों ओर रक्तिमा, दाह शोथ होने से पीड़ा होती हैं।

मेढ्रपाक–पित्त दोष के कारण रक्त में दुष्टि होने पर शिश्नस्थान पर पाक होता हैं। मेढ्रपाक मे शिश्निेन्द्रिय पर रक्तिमा, शोथ, पीड़ा आदि प्रधान लक्षण होते हैं।

मुखपाक–पित्त दोष के कारण रक्त में दुष्टि होने पर मुख मे छाले होता हैं।

प्लीहा वृध्दि–पित्त दोष के कारण रंजक पित्त की दुष्टि होने पर प्लीहा वृध्दि होती हैं।

रक्तगुल्म–त्रिदोष के कारण रक्त दुष्टि होने पर गर्भाशय में रक्तगुल्म उत्पन्न होता हैं। यह स्त्रियों में पायी जाती हैं।

विद्रधि– पित्त और कफ दोष के कारण रक्त दुष्टि होने पर त्वचा और मांस के बीच में विद्रधि उत्पन्न होती हैं।

नीलिका – शरीर की त्वचा पर नीले रंग के चकत्ते होना। पित्त दोष के कारण सूक्ष्म कोशिकाओं में रक्तस्त्राव होने पर त्वचा में रक्त जमने पर नीलिका उत्पन्न होता हैं।

कामला – कामला में पित्त दोष रस एवं रक्तवह स्रोतस् में विमार्ग गमन होने से कोष्ठ से शाखाओं में चला जाता हैं, जिससे नेत्र, नख, त्वचा तथा मूत्र का वर्ण हारिद्र हो जाता हैं।

व्यंग्य – झाई की अवस्था में मुख की त्वचा पर कृष्ण वर्ण के चकत्ते पड़ जाते हैं।

तिल कालक – त्वचा पर छोटे–छोटे कृष्ण वर्णके तिल के समान विकार उत्पन्न होते हैं।

पिप्लु – पीलू के समान छोटे, गोल, चिकने तथा उभार युक्त विकृत रचनायें त्वचा पर हो जाती हैं।

इन्द्रलुप्त –त्वचा, दाढ़ी, शिर के बालों का मण्डलाकार में नष्ट हो जाना।

दद्रु – दाद।

पामा –छाजन। अधिक जल के सम्पर्क से त्वचा के क्लिन्न एवं मलिन होने पर हाथो एवं पैरों के अग्रभाग में प्रारम्भ में यह रक्त विकार होता हैं, रो के उग्र होने पर शरीर के अग्र भाग में भी हो जाती हैं।

चर्मदल – त्वचा का मोटा एवं अरूण वर्ण का हो जाना।

कोठ – त्वचा पर रक्त वर्ग के शोथ युक्त चकत्ते।

श्वित्र – श्वेत कुष्ठ।

वातरक्त – वातरक्त रोग एवं रक्त के प्रकोप से होता हैं।

रक्तसण्डल– मण्डलाकार रक्तिमा लिए हुए यह त्वक् विार पित्त के प्रकोप से रक्त दूषित होने पर उत्पन्न होता हैं।

रक्त धातु दुष्टि के कारण

प्रदुष्टबहुतीक्ष्णोष्णैर्मद्यैरन्यैश्च तद्विधैः|
तथाऽतिलवणक्षारैरम्लैः कटुभिरेव च||५||
कुलत्थमाषनिष्पावतिलतैलनिषेवणैःद्य
पिण्डालुमूलकादीनां हरितानां च सर्वशः||६||
जलजानूपबैलानां प्रसहानां च सेवनात्द्य
दध्यम्लमस्तुसुक्तानां सुरासौवीरकस्य च||७||
विरुद्धानामुपक्लिन्नपूतीनां भक्षणेन चद्य
भुक्त्वा दिवा प्रस्वपतां द्रवस्निग्धगुरूणि च||८||
अत्यादानं तथा क्रोधं भजतां चातपानलौद्य
छर्दिवेगप्रतीघातात् काले चानवसेचनात्||९||
श्रमाभिघातसन्तापैरजीर्णाध्यशनैस्तथाद्य
शरत्कालस्वभावाच्च शोणितं सम्प्रदुष्यति||१०||
च0सू0 24/5.10 ।।[11]

दूषित मद्य के पीने से, अत्यधिक मद्यपान करने से, तीक्ष्ण एवं उष्ण मद्यों के सेवन से, इसी प्रकार के अन्य मद्य जैसे– गांजा, भांग, चरस, अफीम, आदि के सेवन से, क्षार, अम्ल, कटु, पध्दार्थो के सेवन से, कुलथी, उड़द, सेम आौर तिल तैल के निरन्तर सेवन से, पिलाण्डू, मूली तथा हरितवर्गोक्त पदार्थ के अधिक मात्रा मे सेवन करने से, जलीय, आनूप, देशीय एवं बिल में रहने वाले पशु–पक्षियों के मांस का निरन्तरसेवन करने से, दही, अम्ल, दही का पानी सत्तू, सुरा, सौवीरक के सेवन करने से, मात्रा, देश, काल संयोग विरूध्द गीले तथा दुर्गन्धित पध्दार्थो के सेवन से, पतले, स्निग्ध तथा भारी पध्दार्थो को खाकर दिन में सोने से, अधिक भोजन करने, अधिक क्रोध करने, अधिक धूप तथा हवा का सेवन करने से, वेग को रोकने से, समय पर रक्तमोक्षण न करने से, श्रम अभिघात, सन्ताप, अजीर्ण, अध्यशन अर्थात् भोजन करने के कुछ देर बाद पुनः भोजन करना एवं शरद काल के प्रभाव से भी रक्त धातु दूषित हो जाता है।

निष्कर्ष

सप्त धातुओं में प्रमुख धातु रस एवं रक्त धातु हैं। इन दोनों के संयोग से सभी धातुओं का निर्माण होता हैं। अगर ये धातु मनुष्य के शरीर में साम्यावस्था में रहते हैं तो शरीर का पोषण करते हैं और इनमें विकार उत्पन्न हो गया तो यह शरीर को दूषित कर देते हैं, इसलिए धातुओं के वृध्दि एवं क्षय के ज्ञान से हम अपने शरीर को दूषित होने से बचा सकते हैं और लम्बे समय तक जीवन को धारण कर सकते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शर्मा, प्रियव्रत. (1980). सुश्रुत संहिताण्चौखम्भा ओरियन्टालिया वाराणसी, पृष्ठ सं.– 67,
2. ब्याडगी, परमेश्वरप्प0एस्0. (2009). आयुर्वेद विकृति विज्ञान एवं रोग विज्ञानण्अवस. सण्चौखम्भा पब्लिकेशन नई दिल्ली, ISBN:978-81-89798-03-1, पृष्ठ सं.–56.
3. शर्मा, प्रियव्रत. (1980). सुश्रुत संहिताण् चौखम्भा ओरियन्टालिया वाराणसी, पृष्ठ सं. 69,
4. शर्मा,प्रियव्रत. (1980). सुश्रुत संहिताण्चौखम्भा ओरियन्टालिया वाराणसी, पृष्ठ सं. 70,
5. त्रिपाठी, ब्रम्हानन्द. (2009). चरकसंहिताण्अवस.सण्चौखम्भा सुरभारतीप्रकाशन वाराणसी, पृष्ठ सं. -548,
6. त्रिपाठी, ब्रम्हानन्द. (2009). चरकसंहिताण्अवस.सण्चौखम्भा सुरभारतीप्रकाशन वाराणसी, पृष्ठ सं. -699,
7. शर्मा, प्रियव्रत. (1980). सुश्रुत संहिताण्चौखम्भा ओरियन्टालिया वाराणसी, पृष्ठ सं. .67,
8. त्रिपाठी, ब्रम्हानन्द. (2009). चरकसंहिताण्अवस.सण्चौखम्भा सुरभारतीप्रकाशन वाराणसी, पृष्ठ सं. -350,
9. वैद्य, लालचन्द्र. (1963). अष्टांगहृदयम्ण्मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स दिल्ली,पृष्ठ सं. 90,
10. त्रिपाठी,ब्रम्हानन्द. (2009). चरकसंहिताण्अवस.सण्चौखम्भा सुरभारतीप्रकाशन वाराणसी, पृष्ठ सं. -548,
11. त्रिपाठी,ब्रम्हानन्द. (2009). चरकसंहिताण्अवस.सण्चौखम्भा सुरभारतीप्रकाशन वाराणसी, पृष्ठ सं. -430,